THE RESEARCH DIALOGUE
An Online Quarterly Multi-Disciplinary
Peer-Reviewed / Refereed Research Journal
ISSN: 2583-438X
© The Research Dialogue | Volume-04 | Issue-03 | October-2025
Available online at: https://theresearchdialogue.com/
DOI: https://doi.org/10.64880/theresearchdialogue.v4i3.04

शिक्षा के भारतीयकरण में स्वामी दयानंद सरस्वती का योगदान

[1]डॉ० अखिलेश प्रताप सिंह, [2]प्रो० छत्रसाल सिंह
[1]सहायक आचार्य, शिक्षाशास्त्र विभाग, सांई पी०जी० कॉलेज, फतेहपुर, बाराबंकी।
[2]आचार्य, शिक्षासंकाय, उ०प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त वि०वि० प्रयागराज।
[1]Email: akhileshpratapsngh753@gmail.com, [2]Email: chhatrasaal.2011@gmail.com

सारांश :

प्रस्तुत शोध पत्र महर्षि दयानंद सरस्वती के शिक्षा संबंधी विचारों और उनके भारतीय शिक्षा के पुर्नजागरण में योगदान पर आधारित है। 19वीं शताब्दी में जब भारतीय समाज में अंग्रेजी शिक्षा नीति के अन्धानुकरण की परम्परा प्रारम्भ हुई जो भारतीय समाज को उसकी सांस्कृतिक जड़ों से काट रही थी, तब स्वामी दयानंद ने वेदों को समस्त ज्ञान का मूल स्रोत मानते हुए मातृभाषा आधारित, स्वदेशी और चरित्रनिष्ठ वैदिक शिक्षा का पक्ष रखा। उन्होंने शिक्षा को तर्क और विज्ञान से जोड़ते हुए प्रचलित अंधविश्वासों का विरोध किया तथा स्त्री–शिक्षा और गुरुकुल प्रणाली के पुनप्रतिष्ठा की दिशा में कार्य किया। उनके भगीरथी प्रयासों से डी०ए०वी० शिक्षण संस्थान और गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय जैसी संस्थाएँ अस्तित्व में आईं, जिन्होंने आधुनिक विषयों और वैदिक आदर्शों का समन्वय प्रस्तुत किया। इस प्रकार स्वामी दयानंद सरस्वती ने शैक्षिक दृष्टि से भारतीय शिक्षा को आत्मनिर्भर, राष्ट्रवादी और सांस्कृतिक रूप से सशक्त बनाने का मार्ग प्रशस्त किया।

Keywords– *स्वामी दयानंद सरस्वती, शिक्षा का भारतीयकरण, वेद–आधारित शिक्षा, मातृभाषा और स्वदेशी शिक्षा, गुरुकुल प्रणाली, स्त्री–शिक्षा, आर्य समाज, तर्क और विज्ञान–आधारित शिक्षा, राष्ट्रीय चेतना।*

प्रस्तावना:–

पुरातन समय से ही भारत वैश्विक पटल पर ज्ञान के प्रतिबिंब के रूप में परिलक्षित होता रहा है। भारतीय शिक्षा पद्धति, चरक संहिता में वर्णित चिकित्सा पद्धति, सुश्रुत ऋषि की शल्य चिकित्सा, देव शिल्पी भगवान विश्वकर्मा की अभियंत्रिकी, चाणक्य का अर्थशास्त्र, श्रीधराचार्य की गणित व यज्ञ, अधिष्ठान, ज्ञान विज्ञान नवीन आविष्कारों के लिए वैश्विक विद्वानों का मार्गदर्शन करते रहे हैं। अब प्रश्न यह बनता है कि वह कौन सी अध्ययन पद्धति है, जिसका अध्ययन कर उपरोक्त विद्वत जन भारत को विश्व गुरु की स्थिति में प्रतिस्थापित कर पाए थे। तो उत्तर मिलता है, कि वेद वेदांग व उपनिषदों में वर्णित सूक्ति, सूत्र तत्समय के अध्ययन की विषय वस्तु थी।

इसी विषय वस्तु का अध्ययन कर तथा गुरुकुल के प्राकृतिक वातावरण में ब्रम्हचर्य का जीवन व्यतीत कर शिक्षा पूर्ण करने वाले शिक्षार्थी समाज के सफल नागरिक बन, अपने सदकर्मों से समाज का उन्नयन करते थे। इसी भारतीय शिक्षा व ज्ञान विज्ञान से प्रभावित होकर अनेक विद्वान व विद्यार्थी ज्ञान अर्जन हेतु भारत की शरण लिया करते थे।

सहस्त्रों वर्षों तक भारतीय ज्ञान–विज्ञान सम्पूर्ण विश्व के कल्याणार्थ प्रयास करता रहा और यह ज्ञानरूपी लता शताब्दियों तक पुष्पित पल्लवित होती रही। भारत की उन्नति और समृद्धि से केवल ज्ञान अर्जन हेतु विद्यार्थी ही आकर्षित नहीं हुए अपितु विदेशी आक्रमणकारी भी इस भारत भूमि की पावन सुगंध से आकर्षित हुए।

भारत की समृद्धि से प्रभावित होकर मुस्लिम आक्रमणकारियों ने भारत की धन संपदा को लूटने के उद्देश्य से भारत पर आक्रमण करना प्रारंभ किया। मुस्लिम आक्रमणकारियों कि इस अराजकता एवं बर्बरता से यह समृद्ध ज्ञानरूपी लता धीरे धीरे कुम्हलाने लगी।

मुस्लिम आक्रमणकारियों ने भारत भूमि की अपार धन संपदा लूटने के पश्चात अपने धर्म के प्रसार हेतु शिक्षा का माध्यम अपनाया तथा भारतीय शिक्षण संस्थान जिनकी ख्याति विश्व पटल पर थी, को नष्ट करना प्रारंभ किया तथा अपार ग्रंथों से परिपूर्ण पुस्तकालयों को आग के हवाले कर दिया।इस प्रकार के अनेक बर्बरता पूर्ण प्रसंग इतिहास में मिलते हैं। जिनके द्वारा भारतीय संस्कृति एवं शिक्षा पर कुठाराघात किया गया।

तुर्क शक्तियों के आगमन के पश्चात यूरोपीय शक्तियों का भारत आगमन प्रारंभ हुआ। 19वीं शताब्दी तक भारत अंग्रेजी औपनिवेशिक शासन के अधीन हो गया था। मैकाले द्वारा लागू की गई शिक्षा नीति (1835) भारतीयों को अंग्रेजी भाषा व संस्कृति का अनुयायी बनाकर "क्लर्क" तैयार करने के उद्देश्य से बनाई गई थी। इससे भारतीय समाज अपनी परंपरा, संस्कृति और मूल शिक्षा से दूर होने लगा। ऐसे समय में स्वामी दयानंद सरस्वती (1824–1883) ने वेदों को समस्त ज्ञान का मूल स्रोत मानते हुए भारतीय शिक्षा के पुनर्जागरण का मार्ग प्रशस्त किया। स्वामीजी का स्पष्ट मत था, "विद्या वही है जो मनुष्य को विवेकवान बनाए और मुक्ति के मार्ग की ओर ले जाए।" (सत्यार्थ प्रकाश, अ. 4)

स्वामी दयानंद सरस्वती ने उस समय जब अधिकांश अभिजात वर्ग पाश्चात्य सभ्यता एवं साहित्य पर आधारित भारतीय शिक्षा व्यवस्था की स्थापना का प्रयत्न कर रहे थे और भारत भूमि पर भारतीयों की प्रतिभा एवं संस्कृति की अवहेलना कर अंग्रेजी शैक्षिक संस्थाओं की स्थापना के लिए आंदोलन कर रहे थे, तत्समय स्वामी जी ने व्याकरण, साहित्य, वेद, उपनिषद, आयुर्वेद के माध्यम से भारतीय शिक्षा प्रणाली को पुनर्जीवित किया एवं शिक्षा के पाश्चात्यीकरण को रोकने तथा भारतीय पृष्ठभूमि पर आधारित शिक्षा व्यवस्था को निर्मित करने का प्रयास किया तथा शिक्षा को भारतीय संस्कृति, समाज और राष्ट्र की आत्मा से जोड़कर उसके भारतीयकरण का वैचारिक आधार प्रस्तुत किया

वेद–आधारित शिक्षा की पुनर्स्थापनाः–

स्वामी दयानन्द जी परिब्रजक आचार्य की भाँति सम्पूर्ण भारतवर्ष में वैदिक ज्ञान व प्रतिष्ठा की ज्योति प्रदीप्त करते हुए सम्पूर्ण विश्व एवं मानव समाज के कल्याणार्थ यज्ञ करते रहे। उन्होने भारत के विभिन्न प्रान्तों का भ्रमण करते हुए भारतीयों में आर्ष विद्या के प्रचार में अनेक व्याख्यान व शास्त्रार्थ किये व अन्य मतो द्वारा प्रचारित मिथ्याधारणाओं को वैदिक प्रमाणों के आधार पर खण्डित करते रहे। इसी क्रम में स्वामी जी ने आर्थग्रंन्थों की सद्शिक्षा अवधारणा प्रस्तुत की जिसे विभिन्न पुस्तकों एवं पत्रिकाओं के माध्यम से प्रकाशित किया जो महर्षि के निर्वाण के पश्चात् उनके द्वारा स्थापित आर्यसमाज का मार्गदर्शन आधार बना। महर्षि ने आर्ष पाठ विधि से सम्बन्धित विभिन्न ग्रन्थों में वैदिक कालीन गुरुकुल शिक्षा पद्धति का अनुसरण करने का निर्देश दिया तथा वैदिक कालीन शिक्षा की विषयवस्तु को आर्ष विद्या नाम दिया। इस आर्ष विद्या की विषयवस्तु में समस्त लौकिक व पारलौकिक सद् शिक्षाओं का उल्लेख है। वैदिक ग्रन्थों में निहित

विषयवस्तु के अध्ययन से मनुष्य सर्वश्रेष्ठ विद्या का अध्ययन करता है। जिस राष्ट्र में वैदिक ज्ञान का सूर्य प्रदीप्त होता है उस राष्ट्र का वैभव निरंतर प्रगति करता है। स्वामी जी मान्यता है कि सभी मनुष्यों को विद्या अर्जन के अवसर प्राप्त होने चाहिए यद्यपि सभी मनुष्य एक सदृश बुद्धिमता को धारित नहीं करते तथापि सामान्य बुद्धिमता का मनुष्य सद्शिक्षा की प्राप्ति से धार्मिक प्रवृत्ति को अवश्य धारण करते हुए जीवन में धर्म के मार्ग का अनुसरण करेगा।

महर्षि ने अपने शिक्षा विषयक विचार स्वयं द्वारा लिखित पुस्तक 'सत्यार्थ प्रकाश' के द्वितीय व तृतीय समुल्लास में वर्णित किया। महर्षि ने एक अन्य ग्रन्थ 'व्यवहारभानु' व यजुर्वेद भाष्य में भी शिक्षा विषयक विचारों को सरल भाषा में प्रस्तुत किया है। महर्षि दयानन्द जी तृतीय समुल्लास में बालक की औपचारिक शिक्षा पद्धति की पाठ्यचर्या का वर्णन करते हैं–बालक को गुरूकलीय शिक्षा पद्धति में संयमशील जीवन व्यतीत करते हुए अपनी दिनचर्या में गायत्री मंत्र के साथ योगाभ्यास सन्ध्योपासना को भी सम्मिलित करते हैं। प्रथम पाणिनी मुनि कृत शिक्षा जो कि सूत्ररूप है, उसकी रीति अर्थात् इस अक्षर का यह स्थान, यह प्रयत्न, यह करण है। इसी प्रकार यथायोग्य सब अक्षरों का उच्चारण माता–पिता व आचार्य सिखलावे तदान्तर व्याकरण अर्थात् प्रथम अष्टाध्यायी के सूत्रों का पाठ पढ़ावें।

स्वामी दयानंद ने कहा, "वेद सभी विद्या और ज्ञान के भंडार हैं।" (सत्यार्थ प्रकाश, अ. 3) उनके अनुसार विज्ञान, गणित, आयुर्वेद, खगोल, राजनीति और नैतिकता सभी विषयों का मूल वेदों में निहित है। स्वामी दयानंद जी अपनी पुस्तक सत्यार्थ प्रकाश के स्वामन्तव्यामन्तव्य प्रकाशः में वेद ग्रंथ का वर्णन करते हुए, लिखते हैं, "चारों वेदों (विद्या धर्म युक्त ईश्वर प्रणीत संहिता मंत्र भाग) को निभ्रान्त स्वतः प्रमाण मानता हूँ, वे स्वयं प्रमाण रूप है कि जिनके प्रमाण होने में किसी अन्य ग्रंथ की अपेक्षा नही। चारों वेदों के ब्राह्मण, छः अंग, छः उपांग, चार उपवेद व 1127 वेदों की शाखा है जो कि वेदों के व्याख्यान रूप ब्रह्म आदि ऋषियों के बनाए गए थे उनको परतः प्रमाण अर्थात वेदों के अनुकूल से प्रमाण और जो इनके विरूद्ध वचन है उनको अप्रमाण मानता हूं।''

'संस्कृत वाक्य प्रबोध' में वर्णित पाठ्यचर्या के अनुसार, ''पहले वर्णोच्चारण शिक्षा, संस्कृत बोलने का ज्ञान, यथोचित व्यवहार का प्रयत्न, अष्टाध्यायी व महाभाष्य का अध्ययन, शिक्षा, कल्प, निघण्टु–निरूक्त, छन्द व ज्योतिष, वेदों के अंश, मीमांसा, वैशेषिक, न्याय, योग, सांख्य वेदान्त, उपांग, आयुर्वेद, धनुर्वेद, गान्धर्ववेद, अर्थवेद, उपवेद ऐतरेय, शतपथ, साम, गोपथ ब्राह्मण ग्रन्थों को पढ़कर ऋग्वेद, यजुर्वेद सामवेद और अथर्ववेद को पढ़ना चाहिए। इन सबको जानने के बाद धर्म के जानने की इच्छा तथा उसका अनुष्ठान और इन्हीं को सर्वदा पढ़ाना।''

महर्षि दयानन्द ने अपनी पाठविधि में वेद को शिक्षा का आधार माना, जिसमें सभी ज्ञान का स्त्रोत समाहित है। तत्कालीन शिक्षा पद्धति में प्रत्येक खोज, अनुसन्धान का श्रेय यूरोपीय विद्वानों को दिया जाता था जिससे विद्यार्थियों की अपनी संस्कृति एवं ज्ञान परम्परा के प्रति हीन भावना निर्मित हो सके और उन्हें आसानी से विदेशी कुचक्रों में भ्रमित कर कुमार्ग पर चलाया जा सके। उन्होंने यह धारणा तोड़ी कि ज्ञान केवल यूरोप से आया है। उनके विचारों ने भारतीय शिक्षा को अपनी जड़ों से जोड़ने की प्रेरणा दी।

गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का पुनर्जागरणः–

महर्षि दयानन्द ने भारतीय संस्कृति एवं समाज के उत्थान हेतु वैदिक संस्कारों की प्रतिष्ठा हेतु अपने एकल प्रयास को सामूहिक रूप प्रदान करते हुए आर्य समाज का गठन किया। आर्य समाज के सदस्यों द्वारा महर्षि दयानन्द के विचारों को सजीव रूप प्रदान करने के लिए विविध क्षेत्रों में कार्य किये। भारतीय समाज की आगामी पीढ़ी में वैदिक व आर्य ग्रन्थों

के गूढ़ ज्ञान के बीजारोपण के लिए आर्य समाज द्वारा शिक्षा के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण कार्य किये गये क्योंकि शिक्षा के माध्यम से वैदिक ज्ञान परम्परा एवं संस्कारों को उचित रूप से स्थापित व क्रियाशील करना, सर्वोत्तम साधन है। इस परिकल्पना की दृष्टि से आर्यसमाज द्वारा प्रमुखतः दो प्रकार की संस्थानों का ही व्यापक प्रसार दृष्टिगत होता है–

(i) दयानन्द एंग्लो–वैदिक स्कूल व कॉलेज

(ii) गुरुकल

आर्य समाज के अनेक नेताओं को इस बात का असन्तोष था कि डी०ए०वी० कॉलेजों में संस्कृत भाषा, वेदशास्त्र तथा आर्य ग्रन्थों के अध्ययन–अध्यापन की समुचित व्यवस्था नहीं है। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए 'आर्योपदेशक पाठशाला' की स्थापना की गयी। आर्योपदेशक पाठशाला मात्र को ही महर्षि दयानन्द की प्रतिपादित शिक्षा का क्रियात्मक रूप नहीं माना जा सकता क्योंकि उसमें विशारद परीक्षा उत्तीर्ण छात्रों को ही प्रवेश दिया जाता था। उन्होने अंग्रेजी स्कूलों की यांत्रिक शिक्षा के विपरीत गुरुकुल परंपरा का समर्थन किया। गुरुकुल शिक्षा अनुशासन, आत्मनिर्भरता, श्रम, सेवा और नैतिकता पर आधारित थी। इसी क्रम में गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा की गई। यह गुरुकुल उत्तराखण्ड राज्य के कांगड़ी नामक ग्राम के समीपवर्ती स्थान पर 1902 में स्थापित किया गया। परन्तु गुरुकुल कांगड़ी की वास्तविक स्थापना का श्रेय महात्मा मुंशीराम जिन्हें स्वामी श्रद्धानन्द भी कहा गया द्वारा की गयी थी। गुरुकुल के स्नातकों की यह विशेषता होती थी कि इतिहास, अर्थशास्त्र, पाश्चात्य दर्शन आदि किसी आधुनिक विषय के अच्छे ज्ञाता होने के साथ–साथ वे प्राचीन भारतीय ज्ञान (Indology) के भी पारगंत विद्वान होते थे। प्राच्य एवं पाश्चात्य, प्राचीन व अर्वाचीन, संस्कृत और अंग्रेजी सब में समान गति होना गुरुकुल के स्नातकों की एक ऐसी विशेषता थी, जो न सरकारी कॉलेज के ग्रेजुएट्स में पाई जाती थी न ही पुराने ढंग के पण्डितों में। यही कारण है कि अनेक विद्यालंकार, वेदालंकार व सिद्धान्तालंकार विद्वता तथा शिक्षा के क्षेत्र में सम्मानास्पद स्थिति प्राप्त करने में समर्थ हुए।'' गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के इतिहास में 1962 से एक नये समय का प्रारंभ हुआ। स्थापना काल से स्वायत्व व आत्मनिर्भर संस्थान से सम विश्वविद्यालय की स्थिति प्राप्त करने तक के इतिहास को दो काल से विभाजित किया जा सकता है।

पहले समय काल में स्थापना काल से 1947 तक का है, जिस समयावधि में गुरुकुल द्वारा प्रदान की गयी विद्याधिकारी व अलंकार डिग्रियों को सरकार तथा सरकारी विश्वविद्यालयों द्वारा मान्यता प्रदान नहीं किया गया था दूसरी समयावधि में 1947 से 1962 तक का समय है जब गुरुकुल की स्वतन्त्र व स्वायत्त स्थिति कायम थी, परन्तु भारत सरकार तथा राज्य सरकारों द्वारा 'अलंकार' डिग्री को बी०ए० के समकक्ष मान लिया गया था। गुरुकुल कांगड़ी की सफलता के पश्चात गुरुकुल कांगड़ी की विभिन्न शाखाएं गुरुकुल मुलतान, गुरुकुल कुरूक्षेत्र, गुरुकुल इंद्रप्रस्थ, गुरुकुल मरिण्डू इत्यादि खोली गई और इसी श्रृंखला में भारत के विभिन्न प्रांतो में गुरुकुल की स्थापना की गई जिनमें से प्रमुख रूप से गुरुकुल विश्वविद्यालय वृंदावन, गुरुकुल विश्वविद्यालय ज्वालापुर, गुरुकुल चित्तौड़गढ़, गुरुकुल झज्जर श्रीमद दयानंद आर्ष विद्यापीठ स्थापित किए गए। भारत में वैदिक ज्ञान के दीपक को प्रज्वलित करने के साथ–साथ गुरुकुलों की यह श्रृंखला विदेशों में भी अपने वैदिक ज्ञान के ज्ञान सागर को प्रसारित करती रही जिसमें मॉरीशस, पूर्वी अफ्रीका, म्यांमार, सिंगापुर, सूरीनाम इत्यादि राष्ट्रों में भी दयानंद सरस्वती के शिक्षा दर्शन पर आधारित व वैदिक ज्ञान की प्रतिष्ठा हेतु गुरुकुलों की स्थापना की गई।

स्त्री–शिक्षा का भारतीय स्वरूपः–

महर्षि दयानन्द सरस्वती के अनेक विलक्षण कार्यों में स्त्री शिक्षा के क्षेत्र में किये गये कार्य अतुल्यनीय हैं। महर्षि ने माता को बालक का प्रथम गुरू बताया है। ''महर्षि दयानन्द सरस्वती भारत के सामाजिक इतिहास के पहले सुधारक थे जिन्होंने शूद्र तथा स्त्री को वेद पढ़ने तथा ऊँची शिक्षा प्राप्त करने, यज्ञोपवीत धारण करने तथा अन्य सभी पक्षों में ऊँची जाति तथा पुरूषों की भांति अधिकार प्राप्त करने के लिए आन्दोलन किया।'' वेदों में नारी की शिक्षा, शील, गुण, कर्तव्य और अधिकारों का विशद वर्णन है। इस प्रकार का वर्णन संभवतः संसार के किसी भी धर्मग्रन्थ में नहीं है। चारों वेदों में सैकड़ों नारी विषयक मंत्र दिये गये हैं, जिनमें स्पष्ट होता है कि वैदिक काल में नारी का समाज में विशेष स्थान था तथा पुरूषों की भांति उन्हें जीवन के हर क्षेत्र में बराबर का स्थान प्राप्त था।

स्वामीजी ने वेदों का प्रमाण देकर कहा, "यथा नार्यः वेदाध्यायनी भवति।" अर्थात स्त्री भी वेदाध्ययन की अधिकारी है। ''स्वामी दयानन्द जी ने जोरदार शब्दों में कहा था, कि राष्ट्र, समाज, प्रशासन तथा परिवार के क्रियाकलाप तब तक उचित ढंग से नहीं किये जा सकते, जब तक स्त्रियों को शिक्षा न मिलें।''

महर्षि दयानन्द जी सत्यार्थ प्रकाश के तृतीय समुल्लास मैं बालक बालिकाओं की शिक्षा एक निर्धारित समय पर प्रारम्भ करने के राजनियम का भी उल्लेख करते हैं। ''कन्यानां सम्प्रदानं च कुमाराणां च रक्षणम्। अर्थात् यह राजनियम होना चाहिए कि पाँचवे अथवा आठवें वर्ष से आगे अपने लड़के और लड़कियों को घर में न रखें। पाठशाला में अवश्य भेज देवें। जो न भेजे वह दण्डनीय हो।'' इस प्रकार उन्होंने स्त्रियों की शिक्षा को सामाजिक उत्थान और राष्ट्र की प्रगति का आवश्यक अंग माना और इस उन्नत परम्परा को पुनर्जीवित करने के लिए आर्यसमाज द्वारा विभिन्न स्त्री शिक्षण संस्थाओं की स्थापना की। इसी क्रम में आर्य प्रतिनिधि सभा, पंजाब द्वारा बालकों का गुरुकुल खोलने से एक दशक पहले वैदिक आदर्शों के अनुसार कन्याओं को आर्य संस्कृति की शिक्षा देने के लिए कन्या महाविद्यालय, जालन्धर की स्थापना की गयी थी। यह स्त्री शिक्षा का बड़ा क्रान्तिकारी और साहसिक कार्य था। आर्य समाज के इतिहास में लाला देवराज और महात्मा मुंशीराम को स्त्री शिक्षा और गुरुकुल प्रणाली के जन्मदाता के रूप में सदैव स्मरण किये जायेंगें। आर्य समाज की विभिन्न शिक्षण संस्थाओं को दो वर्गों में बांटा जा सकता है– कन्या गुरुकुल तथा पुत्री पाठशालाएं। कन्या गुरुकुलों की यह विशेषता थी कि ये तत्कालीन ब्रिटिश सरकार के शिक्षा विभागों द्वारा बनाये गये पाठ्यक्रम तथा नियमों को स्वीकार नहीं करते थे। ये अपना स्वतन्त्र पाठ्यक्रम स्वयमेव निश्चित करते थे व अपनी संस्था के लिए स्वयं नियम बनाते थे। इनका पाठ्यक्रम सत्यार्थ प्रकाश में वर्णित पाठ विधि के अनुसार सांगोपांग वेद वेदांग, संस्कृत साहित्य, दर्शन, इतिहास आदि प्राचीन भारतीय संस्कृति से सम्बन्ध रखने वाले विषयों पर अध्ययन किया जाता था। उन संस्थाओं को किसी प्रकार का सरकारी अनुदान नहीं मिलता था। ये संस्थाएं आर्य जनता से प्राप्त दान की सहायता से अपना व्यय पूरा करती थी। दूसरे प्रकार की संस्थायें पुत्री पाठशालाएं व कन्या विद्यालय थे। ये राज्य सरकारों के शिक्षा विभाग द्वारा स्वीकृत पाठ–विधि के अनुसार कन्याओं की शिक्षा की व्यवस्था करते थे। इन संस्थानों में सरकारी प्रावधानों का पालन भी किया जाता था तथा सरकार से अनुदान भी प्राप्त होता था। इनके पाठ्यक्रम में आर्य संस्कृति और सभ्यता का ज्ञान धर्म शिक्षा के एक पृथक विषय के रूप में दिलाया जाता है।'' ''आर्य समाज के इतिहास में स्त्री शिक्षण–संस्थाओं के विकास क्रम को तीन बड़े युगों में बाँटा जा सकता है। (1) कन्या महाविद्यालय युग (1890 से 1922 तक) –कन्या महाविद्यालय अपने ढंग की एक अनूठी और अनोखी संस्था है। इसने आर्यसमाज में स्त्री शिक्षा का श्रीगणेश किया और प्रबल विघ्न–बाधाओं के होते हुए भी इसे इतनी सफलता से सम्पन्न किया कि यह अपने समय की आदर्श अनुकरणीय संस्था बन गयी और इसके

नमूने पर अनेक आर्यसमाजों ने अपने यहाँ कन्या महाविद्यालय शुरू किये। (2) दूसरा युग कन्या गुरुकुलों का है। यह 1923 में कन्या गुरुकुल, देहरादून की स्थापना से प्रारम्भ हुआ। इसके बाद उत्तर प्रदेश, गुजरात आदि विभिन्न प्रान्तों में गुरुकुलों की स्थापना हुई। (3) तीसरा युग 1956 से दिल्ली में नरेला कन्या गुरुकुल की स्थापना के साथ शुरू हुआ। यह कन्या गुरूकुलों की आर्ष–पद्धति के विकास का युग है। इस आर्ष–पद्धति के जन्मदाता स्वामी व्रतानन्द और आचार्य भगवानदेव थे। उनका विश्वास था कि देहरादून आदि के कन्या गुरूकुलो में महर्षि की सत्यार्थ प्रकाश में वर्णित पाठविधि का पूरा अनुसरण नही होता है। कन्याओं को महर्षि द्वारा प्रतिपादित पाठविधि के अनुसार वेद–वेदांगों का सम्पूर्ण ज्ञान कराया जाना चाहिए।''

आर्य समाज द्वारा जिन प्रमुख स्त्री शिक्षण संस्थानों ने स्त्री शिक्षा के क्षेत्र में अपना अग्रणी योगदान दिया उनमें कन्या महाविद्यालय जालन्धर, कन्या गुरुकुल हाथरस (अलीगढ़), कन्या गुरूकुल देहरादून, कन्या गुरुकुल हरिद्वार, आर्य कन्या गुरुकुल पोरबन्दर का नाम उल्लेखनीय है। इस प्रकार स्वामी दयानन्द सरस्वती के स्त्री शिक्षा के सैद्धान्तिक व वैदिक आधार को आर्य समाज द्वारा मूर्त रूप प्रदान किया। स्वामी दयानन्द सरस्वती के विचारों ने भारत में आधुनिक स्त्री–शिक्षा आंदोलन को वैदिक आधार प्रदान किया।

स्वदेशी भाषा और मातृभाषा में शिक्षाः–

स्वामी दयानंद सरस्वती ने कहा कि शिक्षा का माध्यम भारतीय भाषाएँ होना चाहिए, न कि अंग्रेजी। शिक्षा का उद्देश्य केवल नौकरी नहीं बल्कि चरित्र–निर्माण और राष्ट्र सेवा होना चाहिए। उन्होंने व्यावहारिक और नैतिक शिक्षा पर जोर दिया ताकि समाज आत्मनिर्भर बने। स्वामी दयानंद सरस्वती का मानना था कि भारत में अंग्रेजी शिक्षा प्रणाली भारतीयों को उनकी संस्कृति और मातृभाषा से काटकर पराधीन मानसिकता में ढाल रही थी। उन्होंने शिक्षा को भारतीयकरण के लिए अनिवार्य रूप से मातृभाषा और स्वदेशी संस्कृति से जोड़ने की आवश्यकता बताई।

स्वामी दयानंद ने स्पष्ट रूप से कहा कि "विद्या तभी सार्थक है जब वह जनसाधारण की भाषा में हो"। अंग्रेजी भाषा में शिक्षा केवल उच्च वर्ग तक सीमित रही, जबकि मातृभाषा में शिक्षा व्यापक समाज तक पहुँच सकती थी। मातृभाषा में शिक्षा से समझ और आत्मीयता का विकास संभव होता है। शिक्षा का उद्देश्य केवल नौकरी नहीं, बल्कि चरित्र निर्माण और समाज सेवा होना चाहिए। कृषि, शिल्प, आयुर्वेद और खगोल विज्ञान जैसे विषयों को शिक्षा में स्थान मिलना चाहिए।

मातृभाषा में शिक्षा के विचार ने आगे चलकर राष्ट्रीय शिक्षा आंदोलन को प्रेरित किया। गांधी और तिलक जैसे नेताओं ने भी शिक्षा को मातृभाषा में देने का समर्थन किया।

तर्क और विज्ञान–आधारित शिक्षाः–

दयानंद जी ने अंधविश्वास, मूर्तिपूजा और कुरीतियों का विरोध किया। उन्होंने कहा, "जो विद्या मनुष्य को तर्क और प्रमाण से दूर कर दे, वह विद्या नहीं, अविद्या है।" उनकी दृष्टि में भारतीय शिक्षा तभी सार्थक है जब वह वैज्ञानिक, तार्किक और समाजोपयोगी हो। उन्होने स्पष्ट किया कि भारतीय समाज में अंधविश्वास और कर्मकांड शिक्षा में बाधक थे। स्वामी दयानंद ने शिक्षा को तर्क और विज्ञान पर आधारित बनाने का आह्वान किया। मूर्तिपूजा और रूढ़ियों को उन्होंने शिक्षा की राह में अवरोध माना। महर्षि ने अपनी पुस्तक सत्यार्थ प्रकाश के माध्यम से जनसामान्य में विज्ञान और वैदिक दृष्टि को जाग्रत करने के लिए कहते है कि वेद केवल धार्मिक ग्रंथ नहीं बल्कि वैज्ञानिक ज्ञान का भंडार हैं। दयानंद जी ने वेदों में खगोल और चिकित्सा से जुड़े संदर्भों की व्याख्या की तथा कृषि, योग, आयुर्वेद जैसी विधाओं को शिक्षा में स्थान देने की वकालत की। शिक्षा का उद्देश्य छात्रों को तार्किक और सृजनशील नागरिक बनाना होना चाहिए।

शिक्षा के भारतीयकरण के प्रभावः–

1. राष्ट्रीय चेतना का विकास व भारतीयों में अपनी संस्कृति पर गर्व और स्वतंत्रता आंदोलन के लिए प्रेरणा।
2. सामाजिक सुधार, स्त्री–शिक्षा, विधवा–पुनर्विवाह और छुआछूत उन्मूलन को बल।
3. संस्कृति का पुनर्जागरण, वेद और भारतीय परंपरा पर आधारित गौरव की भावना।
4. आत्मनिर्भरता व शिक्षा का लक्ष्य केवल रोजगार न होकर आत्मनिर्भर और स्वदेशी समाज का निर्माण।
5. आधुनिकता और परंपरा का समन्वय प्रस्तुत करते हुए डी०ए०वी० और गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय ने वैदिक आदर्शों को आधुनिक विषयों से जोड़कर नई शिक्षा प्रणाली दी।

निष्कर्षः–

स्वामी दयानंद सरस्वती ने शिक्षा को भारतीय आत्मा और संस्कृति से जोड़कर उसके भारतीयकरण की प्रक्रिया को दिशा दी। उन्होंने वेदों को ज्ञान का स्रोत मानकर भारतीयों को आत्मगौरव का बोध कराया। गुरुकुल प्रणाली, स्त्री–शिक्षा, मातृभाषा में शिक्षा और आर्य समाज के शैक्षिक संस्थानों के माध्यम से उन्होंने ऐसी शिक्षा का मार्ग प्रशस्त किया जो भारतीय संस्कृति और आधुनिक विज्ञान दोनों का समन्वय थी।

आज भी भारतीय शिक्षा को स्वदेशी, मूल्यपरक और आत्मनिर्भर बनाने के लिए स्वामी दयानंद के विचार अत्यंत प्रासंगिक हैं।

संदर्भ सूची (References / Bibliography)

1. दयानंद सरस्वती, सत्यार्थ प्रकाश, आर्य समाज प्रकाशन, नई दिल्ली ।
2. चतुर्वेदी, बालकृष्ण, स्वामी दयानंद और राष्ट्रीय जागरण, दिल्ली, हिंदी साहित्य सभा, 1982।
3. शर्मा, धर्मपाल, भारतीय शिक्षा का इतिहास, वाराणसी, चौखंबा प्रकाशन, 2001।
4. मिश्रा, रामनाथ, आर्य समाज और शिक्षा आंदोलन, लखनऊ, नवीन प्रकाशन, 1998।
5. Altekar, A-S- Education in Ancient India- Varanasi: Banaras Hindu University Press, 1957.
6. J-T-F- Jordens- Dayananda Saraswati: His Life and Ideas- Delhi: Oxford University Press, 1998
7. डॉ० सत्यकेतु विद्यालंकार, आर्य समाज का इतिहास (तृतीय भाग) : पृ०सं० 231

Cite this Article:

डॉ० अखिलेश प्रताप सिंह एवं प्रो० छत्रसाल सिंह,शिक्षा के भारतीयकरण में स्वामी दयानंद सरस्वती का योगदान,The Research Dialogue, Open Access Peer-reviewed & Refereed Journal, pp.33 – 39.
https://doi.org/10.64880/theresearchdialogue.v4i3.04

This is an Open Access Journal / article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution License CC BY-NC-ND 3.0) which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited. All rights reserved

CERTIFICATE

of Publication

This Certificate is proudly presented to

डॉ० अखिलेश प्रताप सिंह एवं प्रो० छत्रसाल सिंह

For publication of research paper title

शिक्षा के भारतीयकरण में स्वामी दयानंद सरस्वती का योगदान

Published in 'The Research Dialogue' Peer-Reviewed / Refereed Research Journal and E-ISSN: 2583-438X, Volume-04, Issue-03, Month October, Year-2025.

Dr. Lohans Kumar Kalyani
Editor- In-chief

Dr. Neeraj Yadav
Executive-In-Chief- Editor

Note: This E-Certificate is valid with published paper and the paper must be available online at: https://theresearchdialogue.com/

DOI: https://doi.org/10.64880/theresearchdialogue.v4i3.04